देवताओं का वृक्ष देवदार

एन. के. बौहरा व प्रदीप चौधरी

देवदार जिसे कश्मीर में दिआर और हिमाचल में कैलोन कहते हैं पर्वतीय प्रदेश का एक पवित्र व पूजनीय पेड़ है। इसका नाम दो शब्दों देव (देवता) व डारू (वृक्ष) से मिलकर बना है। प्राचीन संस्कृत अभिलेखों में देवादारू या देओदारू नाम से इस वृक्ष का उल्लेख मिलता है। देवदार को अंग्रेज़ी में इंडियन या हिमालयन सिकार कहते हैं। इसका वानस्पतिक नाम *सिड्रस देवदारा* (रॉक्सबर्गी) है। सिड्रस का उद्‌गम ग्रीक शब्द केडरॉस से हुआ है जिसका अर्थ है- कोनीफर अर्थात शंकु वाले पादप। यह वृक्ष बहुत ही खूबसूरत होता है। उच्च गुणवत्ता की लकड़ी के रूप में भी इसका अपना एक विशिष्ठ स्थान है। इसकी लकड़ी का उपयोग मुख्यतः मंदिरों तथा बड़े और खास घरों के निर्माण में होता आया है। पहले राष्ट्रीय स्तर पर रेल्वे स्लीपर बनाने में इसकी लकड़ी का उपयोग किया जाता था लेकिन अब इसकी जगह कॉन्क्रीट ने ले ली है।

देवदार सदा हरा रहने वाला तथा गहरी हरी पत्तियों वाला आकर्षक वृक्ष है। इसकी चमकीली तथा नुकीली पत्तियां इसकी सुन्दरता को और बढ़ा देती हैं। इसका शंकु के आकार का शीर्ष, वृक्ष की आयु बढ़ने के साथ-साथ गोल, चौड़ा और चपटा हो जाता है जिसमें से शाखाएं फैलती जाती हैं। कभी-कभी इसका शीर्ष तेज़ हवा या बर्फ गिरने से चपटा हो जाता है। जब वृक्ष पूर्णतः परिपक्व हो जाता है तो उसकी लम्बाई 40 मीटर तक हो जाती है। इस वृक्ष की छाल पतली, हरी होती है जो धीरे-धीरे गहरी भूरी होती जाती है तथा इसमें दरारें पड़ जाती हैं। इसकी पत्तियों की उम्र 2 से तीन साल तक होती है। एक विख्यात वानिकी विशेषज्ञ दल ने 1914 में कुल्लू (हिमाचल प्रदेश) में एक चट्टान पर उगे एक वृक्ष की मोटाई 6 मीटर तक नापी जबकि इसकी ऊंचाई लगभग 52 मीटर थी। देवदार के 72 मीटर तक ऊंचे होने की जानकारी है। इसी प्रकार एक 700 वर्ष पुराने देवदार के तने की एक काट फॉरेस्ट रिसर्च इंस्ट्टियूट देहरादून के टिम्बर म्यूज़ियम में रखी हुई है।

देवदार के प्राकृतिक वन सम्पूर्ण पश्चिमी हिमालय में अफगानिस्तान से लेकर गढ़वाल (उत्तरप्रदेश) के पूर्वी भाग तक फैले हैं। वर्तमान में यह उत्तरप्रदेश के कुमांऊ क्षेत्र तक अपना प्राकृतवास बना चुका है। यह आंतरिक शुष्क तथा बाहरी आर्द्र मॉनसून वाले हिमालयी क्षेत्रों में उग सकता है। देवदार समुद्र तल से 1200 से 3000 मीटर तक की ऊंचाई वाले क्षेत्रों में उग सकता है। इस वृक्ष की अधिकतम वृद्धि ठण्डे प्रदेशों में समुद्र तल से लगभग 1800-2600 मीटर ऊंचाई पर पाई गई है। भारत में देवदार के वन हिमाचल प्रदेश, जम्मू व कश्मीर तथा उत्तरप्रदेश में पाए जाते हैं।

देवदार के वनों का कुल क्षेत्र लगभग 2,03, 250 हेक्टेयर के है जो हिमाचल प्रदेश, जम्मू व कश्मीर तथा उत्तर प्रदेश में फैला हुआ है। देवदार के घने वृक्ष मुख्यतः 100 से 1800 मि.मी. वर्षा वाले तथा -12° सेल्सियस (न्यूनतम) से 38 डिग्री सेल्सियस (अधिकतम) तक के तापमान वाले क्षेत्रों में पाए जाते हैं। ये वृक्ष कई अन्य पादपों के साथ पाए जाते हैं। इनमें मुख्य हैं बनाफशा (*वायोला कैनिसेन्स*) झाड़ी या आइवी (*हेडेरा हेलिक्स*) प्रतान, रस्पबेरी (*रूबस*) प्रजाति, जंगली

गुलाब (*रोसा मोस्केटा*) तथा गुच्ची (*मोरकेला एस्क्यूलेन्टा*) कवक। कुछ शंकु वृक्ष ब्ल्यू पाईन (*पाइनस वालीचाईना*) तथा स्प्रूस (*पाईसिआ स्मिथियाना*) भी देवदार के सहयोगी पादप के रूप में मिलते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ अन्य वृक्ष जैसे चिलगोज़ा (*पाइनस ज़िरेडियाना*), ओक (*करकस इलिक्स*) आदि भी देवदार के वनों में सहयोगी पादप के रूप में पाए जाते हैं।

देवदार सामान्यतः वर्ष भर हरा भरा रहता है परन्तु इसकी नई पत्तियां मार्च से मई तक आती हैं तथा पुरानी पत्तियां झड़ जाती हैं। देवदार के वृक्ष में नर एवं मादा पुष्प एक ही वृक्ष पर लेकिन अलग-अलग शाखों पर पाए जाते हैं। इसके नर पुष्प जून में आते हैं तथा सितम्बर-अक्टूबर तक परिपक्व होकर परागकण छोड़ देते हैं जबकि छोटे मादा पुष्प शंकु अगस्त में आते हैं तथा इनका परागण सितम्बर-अक्टूबर में होता है। ये शंकु अगले वर्ष जून-जुलाई तक पूर्ण आकार ले लेते हैं तथा इनमें पंख सहित बीज छिपे रहते हैं।

देवदार के वृक्ष सूखा सहन नहीं कर सकते परन्तु पाला तथा तेज़ हवाओं को सह जाते हैं। देवदार के वनों की हानि आम तौर पर अत्यधिक बर्फ गिरने एवं आग लगने से होती है जबकि जानवरों की चराई से इसके पुनर्जनन क्षमता में कमी आती है।

देवदार को सीधे बुआई अथवा रोपणी में तैयार पौधों से उगाया जा सकता है। इसके शंकुओं से अक्टूबर-नवम्बर में बीज एकत्र किए जाते हैं। एक किलो में तकरीबन 7000-8000 बीज होते हैं तथा इनकी अंकुरण क्षमता 70-80 प्रतिशत होती है। इसकी रोपणी में तैयार 2.5 वर्ष से 3 वर्षीय पौधे जुलाई-अगस्त में रोपे जाते हैं।

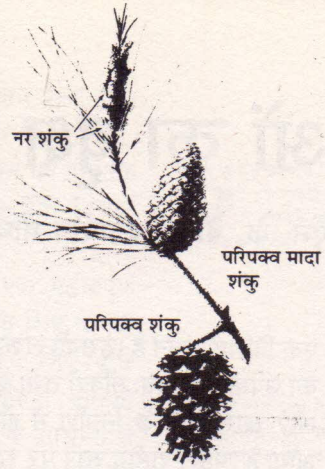

जिमनोस्पर्म (नग्न बीज वाले) की प्रजनन प्रक्रिया शंकुओं में होती है। निषेचन के बाद बीज शंकुओं के ऊपरी छिलकों में पनपते हैं। यहां नर व मादा शंकुओं वाली लबलोली पाइन की एक शाख दिखाई गई है।

उपयोग

देवदार उत्तरी भारत का एक महत्वपूर्ण एवं उपयोगी काष्ठीय है। प्राचीनकाल से ही इसका उपयोग मंदिरों एवं भव्य प्रासादों के निर्माण में होता रहा है। विगत कुछ दशकों से इसका इस्तेमाल रेलवे के स्लीपरों में हो रहा था परन्तु इसकी तेज़ी से घटती संख्या के चलते इसे रोक दिया गया है। इसकी उच्च गुणवत्ता के कारण ही यह सबसे महत्वपूर्ण लकड़ी उत्पाद है।

इसकी लकड़ी में पसीना व मूत्र बढ़ाने वाले औषधीय गुण पाए जाते हैं। बुखार, बवासीर, फेफड़ों एवं मूत्राशय सम्बंधी रोगों में देवदार प्रयुक्त होता है। हिमाचल प्रदेश के कुछ भागों में इसकी लकड़ी का पेस्ट चंदन की तरह ललाट पर लगाया जाता है तथा ऐसी मान्यता है कि इससे सिरदर्द ठीक हो जाता है। देवदार की छाल भी औषधीय महत्व की है तथा इसका उपयोग बुखार, अपच, दस्त आदि रोगों में होता है। देवदार का ओलिव-रेज़िन तथा इसकी लकड़ी के विनाशात्मक संघनन से प्राप्त तेल का उपयोग अल्सर एवं त्वचा रोगों में होता है। देवदार के तेल की मांग इत्र, साबुन तथा अन्य कई उद्योगों में है।

संरक्षण

देवदार के उपयोगों एवं इसकी लकड़ी की बढ़ती मांग के चलते इसके वर्तमान वनों के संरक्षण एवं नए वनों के विकास की अत्यन्त आवश्यकता है। इसके वनों को आग एवं बर्फ के अलावा करीब 60 प्रकार के कीड़े भी हानि पहुंचाते हैं। आज के युग की ज़रूरत है कि इस प्रजाति के वनों को पूर्णतः सुरक्षित बनाया जाए तथा इसके वनों की तेज़ी से वृद्धि की जाए ताकि इस वृक्ष की रक्षा व संवर्धन हो सके। ***(स्रोत विशेष फीचर्स)***